प्राचीन भारत में नारियों की स्थिति

जगत की परिकल्पना स्त्री के बगैर नहीं हो सकती है, स्त्री की दशा ही देश की मानदंड मानी जाती है। प्राचीन भारत के इतिहासकारों ने अपने बृत्तांतो में औरतों को पूरी तरह उपेक्षित नहीं किया है। इनमें वे अन्य देशों के अधिकतर इतिहासकारों से कुछ भिन्न है जिनकी रचनाओं में औरतों को ना के बराबर स्थान दिया जाता था परंतु प्राचीन भारत में औरतों की स्थिति को लेकर जो कुछ लिखा गया है, वह परिवार के अंदर औरतों के स्थान तक सीमित रहा है । औरतों की धार्मिक व कानूनी हैसियत को परखने में भी सिर्फ पारिवारिक संदर्भ पर जोड़ दिया गया है। पति के साथ औरत का धार्मिक रीतियो में भाग लेने का हक,विधवा की स्थिति, स्त्री धन की व्यवस्था, विधवा के बच्चा को गोद लेने के अधिकार आदि पर कुछ लिखा गया है।

प्राचीन भारत की औरतों की जितनी भी जानकारी हमें प्राप्त होती है वह सिर्फ उच्च वर्ग की औरतों की जिंदगी तक ही सीमित थी। लेकिन यह सतही और अपूर्ण चित्रण है। प्राचीन भारत में औरतों का एक महत्वपूर्ण तबका दासियों का जीवन जीता था । दास शब्द आमतौर पर गुलामी का पर्यायवाची माना जाता है परंतु यह समझना जरूरी है कि भारत में दास की हैसियत वह नहीं थी जो यूनान और रोम में गुलाम की थी ।

प्राचीन बौद्ध ग्रंथों में दास शब्द का आधार है स्वतंत्रता का अभाव । ऋग्वेद से लेकर प्राचीन भारतीय साहित्य में दास दासी दोनों शब्द प्रयुक्त हुए हैं । ऋग्वेद में पुरुष दासो का बहुत ही कम उल्लेख मिलता है बाद में वैदिक साहित्य में धन के संदर्भ में दासियों का कई बार उल्लेख मिलता है। छांदोग्य उपनिषद में स्वामियों के वैभव दर्शाने के लिए पशुओं, सेना, खेत व घरों की सूची में दासियों का भी उल्लेख है । दासता का इतिहास व स्त्री इतिहास दोनों की दृष्टि से यह समझना जरूरी है कि दासियों का अधिक संख्या में होना व उनका अधिक मूल्य माने जाने के कारण क्या थे।

ब्राह्मण, पुरोहितों के स्वामित्व में दसियों की बहुत बड़ी संख्या पाई जाती थी। दासियों का दान या दक्षिणा स्वरूप राजा द्वारा प्रमुख पुरोहित को दे दिए जाने के कई उल्लेख मिलते हैं । बच्चे पैदा करने के अलावे दासिया प्रारंभिक वैदिक समाज में मवेशियों पर आधारित घरेलू उत्पादन में भी योगदान देती होगी ,उसके बाद जब कृषि व्यवस्था पशुपालन की जगह लेने लगी तो कृषि संदर्भ में दासियो के कुछ उल्लेख मिलते हैं ,विशेषकर अथर्ववेद में। बौद्ध साहित्य में एक जगह घर की औरतों और दासियों के नाम में अंतर बताया गया है। ब्राह्मण गुरु भी दासियों का प्रयोग करते थे। प्राचीन साहित्य में घरेलू काम के संदर्भ के अतिरिक्त भी दासियों का उल्लेख मिलता है ,उदाहरणार्थ चौकीदार रूप में। स्वामी के जलसों में भी वे शामिल होती थी। ऋग्वेद में वर्णित है कि एक दासी अपने नवविवाहिता स्वामीनि के साथ , उसका मन बनाने के लिए उसके ससुराल भेजी जाती है।

अर्थशास्त्र के अनुसार वेश्यालय भी राजा द्वारा चलाए जाते थे और भोग की उम्र पार करने पर अक्सर वेश्या दासी को भंडार या रसोई घर के काम के लिए भेजा जाता था। जातकों में कई लेखों से स्पष्ट होता है कि स्वामी लोग अक्सर दासयों को गालियां और धमकियां देते थे। शारीरिक हिंसा के अलावा दासियों को यौनिक हिंसा व शोषण भी सहना पड़ता था । यह दसियों की जिंदगी मे विशेष बोझ था।

अर्थशास्त्र में दासियों के यौन शोषण पर कुछ लगाम लगाने का प्रयत्न किया गया है । कौटिल्य कहते हैं कि स्वामी को गिरवी रखी गई दासियों की सेवा नहीं देनी चाहिए। स्वामी के नियंत्रण में रहने वाली दासियों के यौनिक शोषण को कम करने में कौटिल्य के नियम कहां तक सफल रहे यह कहना कठिन है। छठी और सातवीं सदियों में चीनी यात्रियों के विवरण के अनुसार भारत में दासियॉ थी ही नहीं।

पुनर्भू शब्द उस विधवा के लिए प्रयुक्त होता है जिसने पुनर्विवाह किया हो । नारद के अनुसार सात प्रकार की पत्नियां होती थी जो पहले किसी से विवाहित हो चुकी रहती थी ,उनमें पुनर्भू के तीन प्रकार होते थे और स्वैरिणों के चार प्रकार होते थे । तीन पुनर्भू इस प्रकार है:-

१. वह, जिसका विवाह में पाणिग्रहण हो चुका हो किंतु समागम ना हुआ हो : इसके विषय में विवाह एक बार पुनः होता है।
२. वह स्त्री, जो पहले अपने पति के साथ रहकर उसे छोड़ दें और अन्य पति कर ले किंतु पुनः अपने मौलिक पति के यहां चली जाए
३. वह स्त्री , जो अपने पति की मृत्योपरांत उसके संबंधियों द्वारा, देवर के ना रहने पर किसी सपिंड को या उसी जाति वाले किसी को दे दी जाए अथवा विवाह उसके साथ किया जाए।

चार स्वैरिणी इस प्रकार हैं :-

१. वह स्त्री , जो पुत्रहीन या पुत्रवती होने पर अपने पति की जीवित अवस्था में प्रेमवश किसी अन्य पुरुष के यहां चली जाए ।
२. वह स्त्री , जो अपने मृत पति के भाइयों तथा अन्य लोगों को ना चाहकर किसी अन्य के प्रेम में फंस जाए।
३. वह स्त्री ,जो विदेश में आकर या विवश होकर भूख प्यास से व्याकुल होकर किसी अन्य व्यक्ति की शरण में आकर कह दे "मैं तुम्हारी हूं"।
४. वह स्त्री, जो किसी अजनबी को देशाचार के कारण अपने गुरुजनों द्वारा सुपुर्द कर दी जाए, किंतु स्वैरिणी हो जाने का अपराध करें।

बहुत सी स्मृतियों ने उस पत्नी के लिए, जिसका पति कई वर्षों के लिए बाहर गया हुआ हो, कुछ नियम बनाए हैं। नारद ने यह आदेश दिए हैं कि यदि पति विदेश गया हो तो ब्राह्मण पत्नी को 8 वर्षों तक इंतजार करना चाहिए अथवा उसका राह देखना चाहिए किंतु यदि उसे बच्चा ना हुआ हो तो 4 वर्ष तक ही राह जोहना चाहिए।

वैदिक साहित्य में कुछ ऐसी उक्तियां हैं जिन्हें हम विधवा पुनर्विवाह के अर्थ में ले सकते हैं। "पुनर्भू" शब्द से विधवा विवाह पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है किंतु विवाह विच्छेद या तलाक के विषय में यहां कुछ भी वर्णित नहीं है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कुछ ऐसे नियम है, जो विवाह विच्छेद के विषय में बतलाते हैं । जैसेः यदि पति नहीं चाहता तो पत्नी को छुटकारा नहीं मिल सकता है, इसी प्रकार यदि पत्नी नहीं चाहती तो पति को छुटकारा नहीं प्राप्त हो सकता है, किंतु दोनों के पारस्परिक विद्वेष से तो छुटकारा संभव है।

नियोग का अर्थ है- किसी नियुक्त पुरूष के संभोग द्वारा पुत्रोत्पत्ति के लिए पत्नी या विधवा की नियुक्ति I इस प्रथा के उद्गम एवं उपयोग के विषय में विविध मत दिए गए हैं । गौतम ने इसकी चर्चा की है कि पतिविहीन नारी यदि पुत्र की अभिलाषा रखे तो अपने देवर द्वारा प्राप्त कर सकती हैं। मनु का कथन है कि पुत्रविहीन विधवा अपने देवर या पति के सपिंड से पुत्र उत्पन्न कर सकती है ।

गौतम जैसे धर्मसूत्रकारो ने नियोग को वैध ठहराया है। वहीं कतिपय अन्य धर्मसूत्रकारों ने इसे घृणास्पद मान वर्जित किया है I स्मृतियों में नियोग संबंधी नियमों के विषय में बहुत से मतांतर हैं । नियोग से उत्पन्न पुत्र किसका है?, इस विषय में भी मतैक्य नहीं है । नियोग अति प्राचीन प्रथा का अवशेष मात्र था जो क्रमशः विलीन होता हुआ ईशा की आरंभिक शताब्दियों में भारत में सदा के लिए वर्जित हो गया।

सती होना भारत में अपराध माना जाता है, किंतु लगभग 100 वर्ष पूर्व इस देश की विधवाओं का सती हो जाना एक धर्म माना जाता था I विधवाओं का सती होना अर्थात पति की चिता पर जलकर भस्म हो जाना, केवल ब्राह्मण धर्म में ही नहीं पाया गया है बल्कि यह प्रथा मानव समाज की प्राचीनतम धार्मिक धारणा एवं अंधविश्वास की पूर्ण कृतियों में समाविष्ट रही है । वैदिक साहित्य में सती होने के विषय में ना तो कोई निर्देश मिलता है और ना ही कोई मंत्र ही प्राप्त होता है I कुछ अभिलेखों में सती होने के उदाहरण मिलते हैं I इनमें सबसे प्राचीन गुप्त संवत 191 (510 ईसवी) का अभिलेख है।

स्त्रीधन के विषय में भी विद्वानों में मतांतर हैं। वैदिक साहित्य में स्त्रीधन के विषय में वर्णन मिलता है।ऋग्वेद के विवाह संबंधी दो मंत्रों में वधू के साथ वर के घर के लिए उपहार भेजने का वर्णन आया है । बौधायन धर्मसूत्र का कथन है कि कन्याएं अपनी माता के आभूषण पाती हैं और परंपरा से जो कुछ मिलना चाहिए वह भी उन्हें प्राप्त होता है I स्त्री धन के तीन प्रमुख विषय आते हैं: स्त्री धन क्या है ? स्त्री धन पर स्त्री का अधिपत्य एवं स्त्री धन का उत्तराधिकार।

स्त्री धन का शाब्दिक अर्थ है स्त्री की संपत्ति । किंतु प्राचीन स्मृतियों में इस शब्द को इस प्रकार संपत्ति के विशिष्ट प्रकारों तक ही सीमित रखा है , जो स्त्री को विशिष्ट अवसरों या जीवन के विभिन्न स्तरों पर ही प्रदत्त होते थे। बाद में इसके मायने बदल गए । स्मृतिकारों में कात्यायन ने 27 श्लोकों में स्त्री धन का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

स्मृतियों के कथनो से व्यक्त होता है कि स्त्री धन एक प्रकार का ऐसा धन था जिसमें पहले छः प्रकार की संपत्ति की गणना होती थी और आगे चलकर वह 9 प्रकार का हो गया I कात्यायन के समय में उसमें सभी प्रकार की संपत्ति सम्मलित हो गई I जिसे कोई स्त्री कुमारी अवस्था में या विवाहित होते समय या विवाह के उपरांत अपने माता-पिता या कुल के किसी संबंधियों अथवा पति एवं उसके कुल से प्राप्त करती थी । याज्ञवल्क्य की व्याख्या में मिताक्षरा ने कहा है कि “माता , पिता , पति एवं भाई द्वारा जो कुछ दिया जाए, विवाह के समय वैवाहिक अग्नि के समक्ष, मामा आदि द्वारा जो कुछ भेंट दी जाए वह सब स्त्री धन है ” ।

स्त्री धन पर किसका अधिकार है ? यह उस समय की परिस्थितियों पर निर्भर करता है । संपत्ति प्राप्त करने का उद्देश्य , प्राप्ति के समय उसकी स्थिति, वह कुमारी है या विवाहित है, सधवा है अथवा वह विधवा है । मूल बात यह है कि वह संप्रदाय जिसके अनुसार उस पर स्मृति शासन होता है वह महत्वपूर्ण है । इस विषय में हिंदू व्यवहार शास्त्र में बहुत विद्वानों के विचारों में अंतर मिलते हैं । स्त्री धन का उत्तराधिकार के संबंध में सभी विद्वान इस स्थान पर एक हो जाते हैं। स्त्री धन का उत्तराधिकार सर्वप्रथम कन्याओं को प्राप्त होना चाहिए अर्थात कन्याओं को पुत्रों की अपेक्षा वरीयता मिलनी चाहिए किंतु आगे चलकर कुछ लेखकों ने पुत्रों को कन्याओं के साथ जोड़ दिया और कुछ स्त्री धन प्रकारों में पुत्रों को वरीयता दे दी।

दायभाग के अनुसार व्यभिचारिणी पुत्री को उत्तराधिकार नहीं मिलता किंतु 'मिताक्षरा' ने उस व्यभिचारिणी स्त्री को जो किसी की रखैल या वैश्या है , उसे भी उत्तराधिकार दिया है। मानव जीवन के आदर्श का अंग-धर्म , अर्थ , काम और मोक्ष रहा है । विचारों की पवित्रता को ढंग से पालन करना साधारण तौर पर धर्म कहा जाता है । प्राचीन काल में स्त्रियों की एक ऐसी श्रेणी थी जो उच्च जाति की पत्नी की स्वतंत्रता को सीमित करने वाले नियमों से नहीं बंधी थी । यह गणिका अथवा वैश्या होती थी ,जिनका जीवन भिक्षा अथवा निम्न कार्य करने में व्यतीत होता था । पांचवी- छठी शताब्दी से सामंतवादी वातावरण भारत में लगभग व्याप्त हो गया था । जिसे विद्वानों ने युद्ध एवं वासना का काल माना है । इसी समय बहुत सारे ऐसे मंदिर बने जिनमें नग्न प्रतिमाएं कामोत्तेजक मुद्रा में निर्मित हुई।

बौद्ध कथाओं में वर्णित वैशाली की गणिका आम्रपाली थी, जो इस प्रकार की पूर्ण दक्ष वेश्याओं में आदर्श थी । गणिका पर याज्ञवल्क्य ने भी प्रकाश डाला है । रखैल को वह वैश्या कहते हैं । वात्सायन द्वारा रचित कामसूत्र में वेश्याओं की उत्पत्ति आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति तथा ग्राहकों को अपनी ओर आकर्षित करने की चर्चा विशद रूप में हमें प्राप्त होती है । कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में वेश्याओं पर प्रकाश डाला है । सरकारी वेश्याएं राजा का छत्र बढ़ाने का कार्य करती थी । यह अपने यौवन एवं सौंदर्य को खोकर जब ढलती उम्र में आती थी तो उन्हें दाई के पद पर नियुक्त किया जाता था । इनकी सुरक्षा एवं देखभाल राज्य द्वारा की जाती थी । वेश्याओं की स्थिति उप पत्नियों के स्तर में समाविष्ट हो गई।

इस प्रकार हम पाते हैं कि समाज और अर्थव्यवस्था के परिवर्तनों ने स्त्रियों की स्थिति को भी प्रभावित किया । दास की भांति रहने वाली पत्नी को आदर्श पत्नी कहा जाता था परंतु यह बात मुख्यत: अमीर लोगों की पत्नियों पर लागू होते थे । उनके लिए पत्नी वैध संतान को जन्म देने का एक साधन मात्र थी । उन्हें किसी भी सामान्य सभा में बैठने के योग्य नहीं समझा जाता था । उन्हें सदैव पिता, भाई अथवा पुत्र के नियंत्रण में ही रहना होता था ।